



Original Article

21वीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा में चित्रित आर्थिक समस्याएँ

दिव्या जी आर

शोधार्थी

हिंदी विभाग एवं शोध केंद्र, राजकीय महिला महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम, केरल विश्वविद्यालय, तिरुवनंतपुरम

Manuscript ID:

IJAAR-C130321

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume - 13

Issue - 3

January – February 2026

Pp. 100 - 104

Submitted: 17 Jan. 2026

Revised: 25 Jan. 2026

Accepted: 10 Feb. 2026

Published: 28 Feb. 2026

Corresponding Author:

दिव्या जी आर

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.22785569

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.22785569>



Creative Commons



प्रस्तावना:

इक्कीसवीं सदी का भारतीय समाज तीव्र आर्थिक परिवर्तनों से गुजरा है। उदारीकरण, वैश्वीकरण और बाजारवादी नीतियों ने जहाँ विकास के नए अवसर प्रदान किए, वहीं आर्थिक असमानता, बेरोजगारी, किसान संकट और निम्न-मध्यवर्गीय असुरक्षा जैसी समस्याओं को भी गहरा किया। इन परिवर्तनों का प्रभाव केवल आर्थिक संरचना तक सीमित नहीं रहा, बल्कि उसने मानवीय संबंधों, नैतिक मूल्यों और सामाजिक चेतना को भी प्रभावित किया।

हिंदी साहित्य और सिनेमा ने इन आर्थिक यथार्थों को संवेदनशील और आलोचनात्मक दृष्टि से चित्रित किया है। विशेषतः स्वयं प्रकाश की रचनाएँ आर्थिक संकट को मानवीय अस्मिता, आत्मसम्मान और सामाजिक न्याय के प्रश्नों से जोड़ती हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य और सिनेमा में आर्थिक समस्याओं के चित्रण का विश्लेषण करना है, विशेष रूप से स्वयं प्रकाश के कथा-साहित्य के संदर्भ में।

प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य और सिनेमा में चित्रित आर्थिक समस्याओं का विश्लेषण करना है, विशेष रूप से स्वयं प्रकाश की रचनाओं के संदर्भ में। यह अध्ययन यह स्पष्ट करने का प्रयास करेगा कि स्वयं प्रकाश किस प्रकार आर्थिक असमानताओं और संकटों को मानवीय संवेदना, सामाजिक आलोचना और नैतिक प्रश्नों के साथ जोड़ते हैं। साथ ही, यह भी देखा जाएगा कि साहित्य और सिनेमा दोनों माध्यम आर्थिक यथार्थ को किस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं और सामाजिक विमर्श को दिशा प्रदान करते हैं।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

How to cite this article:

दिव्या जी आर. (2026). 21वीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा में चित्रित आर्थिक समस्याएँ. *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(3), 100 - 104. <https://doi.org/10.5281/zenodo.22785569>

इस प्रकार यह भूमिका न केवल विषय की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करती है, बल्कि यह भी संकेत देती है कि इक्कीसवीं सदी का आर्थिक संकट केवल वित्तीय समस्या नहीं, बल्कि

व्यापक मानवीय और सामाजिक प्रश्न है, जिसे समझने के लिए साहित्य और सिनेमा दोनों का अध्ययन अनिवार्य है।



इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य आर्थिक असमानताओं की गहरी पड़ताल करता है। विकास की चमकदार छवि के पीछे छिपी हुई गरीबी, विस्थापन और श्रमिक जीवन की असुरक्षा को अनेक कथाकारों ने विषय बनाया। स्वयं प्रकाश की कहानियाँ इसी यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति हैं। उनके कथा-संसार में आम आदमी आर्थिक दबावों से जूझता हुआ दिखाई देता है—वह कभी बेरोजगार युवक है, कभी अल्प वेतन में काम करने वाला कर्मचारी, तो कभी जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं के लिए संघर्षरत परिवार का मुखिया।

स्वयं प्रकाश की रचनाओं में आर्थिक समस्या केवल आय की कमी नहीं है, बल्कि यह सामाजिक गरिमा, आत्मसम्मान और अस्तित्व के संकट से जुड़ी हुई है। वे दिखाते हैं कि आर्थिक अभाव मनुष्य के संबंधों, उसकी नैतिकता और मानसिक संतुलन को भी प्रभावित करता है। इस दृष्टि से उनकी कहानियाँ आर्थिक यथार्थ को बहुआयामी रूप में प्रस्तुत करती हैं।

इक्कीसवीं सदी का भारतीय समाज वैश्वीकरण, उदारीकरण और नई आर्थिक नीतियों के प्रभाव से गहरे रूप में परिवर्तित हुआ है। इन परिवर्तनों ने जहाँ विकास, तकनीकी उन्नति और उपभोग के नए अवसर प्रदान किए, वहीं बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति को भी सामाजिक जीवन का केंद्रीय तत्व बना दिया। आज व्यक्ति की पहचान उसके नैतिक मूल्यों या सामाजिक योगदान से अधिक उसकी क्रय-शक्ति और उपभोग क्षमता से आँकी जाने लगी है। इस परिवर्तन ने जीवन-मूल्यों, मानवीय संबंधों और सामाजिक संरचना को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य और भारतीय सिनेमा इन परिवर्तनों को संवेदनशील तथा आलोचनात्मक दृष्टि से अभिव्यक्त करते हैं।

हिंदी सिनेमा में भी यह यथार्थ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। *Rocket Singh: Salesman of the Year* कॉर्पोरेट संस्कृति की प्रतिस्पर्धात्मक मानसिकता और नैतिक समझौतों को उजागर करती है। फिल्म यह प्रश्न उठाती है कि क्या आर्थिक सफलता के लिए नैतिक मूल्यों का त्याग आवश्यक है? इसी प्रकार *English Vinglish* मध्यमवर्गीय स्त्री के आत्मसम्मान और सामाजिक स्वीकृति को भाषा तथा उपभोक्तावादी मानकों से जोड़ती है। यहाँ अंग्रेजी ज्ञान केवल भाषा नहीं, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक अवसरों का प्रतीक बन जाता है।

उपभोक्तावाद का एक महत्वपूर्ण प्रभाव मध्यवर्गीय जीवन पर देखा जा सकता है। मध्यवर्ग वह वर्ग है जो न तो पूर्णतः संपन्न है और न ही पूर्णतः निर्धन। वह सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहता है। स्वयं प्रकाश की कहानियों में यह वर्ग आर्थिक दबाव, पारिवारिक जिम्मेदारियों और सामाजिक तुलना की प्रवृत्ति से ग्रस्त दिखाई देता है। सीमित वेतन और बढ़ती महँगाई के बीच आधुनिक जीवन-शैली अपनाने की चाह उसे मानसिक तनाव की स्थिति में ले जाती है।

इसी संदर्भ में *Badhai Ho* मध्यमवर्गीय सामाजिक मानदंडों और प्रतिष्ठा-बोध को यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत करती है। परिवार की निजी घटना भी सामाजिक दृष्टि और 'लोग क्या कहेंगे' की मानसिकता से प्रभावित होती है। यहाँ सामाजिक मान्यता और उपभोक्तावादी छवि एक-दूसरे से गुंथी हुई दिखाई देती हैं।

बाजारवाद केवल वस्तुओं की खरीद-बिक्री तक सीमित नहीं है; यह एक मानसिकता है जो जीवन को प्रतिस्पर्धा और लाभ की दृष्टि से देखती है। इस मानसिकता का प्रभाव मानवीय संबंधों पर भी पड़ता है। व्यक्ति उपयोगिता के आधार



पर संबंधों को परिभाषित करने लगता है। साहित्य और सिनेमा दोनों माध्यम इस प्रवृत्ति की आलोचना करते हुए मानवीय संवेदनशीलता की पुनर्स्थापना का आग्रह करते हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी का हिंदी साहित्य और भारतीय सिनेमा बाजारवाद और उपभोक्तावादी संस्कृति को केवल आर्थिक परिवर्तन के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और नैतिक संकट के रूप में देखते हैं। स्वयं प्रकाश की कथा-दृष्टि तथा समकालीन फिल्मों के उदाहरण यह स्पष्ट करते हैं कि आर्थिक विकास की अंधी दौड़ में यदि मानवीय मूल्यों की उपेक्षा होती है, तो समाज में असंतुलन और असंतोष की स्थिति उत्पन्न होती है। अतः आवश्यक है कि विकास की प्रक्रिया मानवीय गरिमा, सामाजिक न्याय और नैतिक संतुलन के साथ आगे बढ़े।

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा के विस्तार के बावजूद बेरोजगारी एक गंभीर समस्या बनी रही। स्वयं प्रकाश की कहानियों में शिक्षित बेरोजगार युवक की पीड़ा बार-बार उभरती है। वह सपनों और वास्तविकता के द्वंद्व में फँसा हुआ है। आर्थिक अस्थिरता उसके आत्मविश्वास को तोड़ देती है और वह सामाजिक अपमान का अनुभव करता है। लेखक इस संकट को व्यक्तिगत विफलता नहीं, बल्कि व्यवस्था की विफलता के रूप में चित्रित करते हैं।

हिंदी सिनेमा में यह संकट विविध रूपों में सामने आता है। 3 Idiots भारतीय शिक्षा-प्रणाली और करियर-केंद्रित मानसिकता की आलोचना करते हुए युवाओं पर आर्थिक अपेक्षाओं के दबाव को रेखांकित करती है। Masaan छोटे शहरों के युवाओं की आकांक्षाओं और सीमित अवसरों के बीच के तनाव को अत्यंत संवेदनशीलता से प्रस्तुत करती है। वहीं Article 15 सामाजिक और आर्थिक असमानता के

अंतर्संबंध को उजागर करती है, जहाँ जाति और गरीबी मिलकर अवसरों की विषमता को गहरा करते हैं।

किसान और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का संकट:

इक्कीसवीं सदी का भारतीय ग्रामीण समाज गहरे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संकटों से जूझ रहा है। कृषि पर निर्भर विशाल जनसंख्या के बावजूद किसान आज भी आर्थिक सुरक्षा से वंचित है। वैश्वीकरण और उदारीकरण के बाद कृषि-क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन हुए, परंतु इन परिवर्तनों का लाभ समान रूप से किसानों तक नहीं पहुँच सका। उत्पादन लागत में निरंतर वृद्धि, बीज और उर्वरक कंपनियों पर निर्भरता, जलवायु परिवर्तन, सिंचाई संसाधनों की कमी, ऋणग्रस्तता और न्यूनतम समर्थन मूल्य की अनिश्चितता ने किसान जीवन को अत्यंत अस्थिर बना दिया है।

किसान का संकट केवल आर्थिक नहीं, बल्कि अस्तित्वगत और मानवीय भी है। ऋण का बोझ उसके आत्मसम्मान को प्रभावित करता है। अनेक मामलों में यह आर्थिक दबाव उसे आत्महत्या जैसे चरम कदम की ओर धकेल देता है। यह स्थिति केवल व्यक्तिगत दुर्भाग्य नहीं, बल्कि व्यवस्था की विफलता का परिणाम है। जब कृषि-नीतियाँ उत्पादक की सुरक्षा सुनिश्चित नहीं करतीं, तब विकास का दावा अधूरा रह जाता है।

स्वयं प्रकाश की कहानियों में ग्रामीण जीवन का यह संकट अत्यंत संवेदनशील रूप में उभरता है। वे किसान को केवल दया का पात्र नहीं बनाते, बल्कि उसे संघर्षशील, स्वाभिमानी और परिस्थितियों से जूझते हुए मनुष्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनकी रचनाओं में आर्थिक अभाव के साथ-साथ सामाजिक अपमान, पारिवारिक विघटन और सांस्कृतिक विस्थापन की पीड़ा भी दिखाई देती है। गाँव से शहर की ओर



पलायन केवल रोजगार की खोज नहीं, बल्कि जड़ों से कट जाने की प्रक्रिया है। इससे ग्रामीण सामाजिक संरचना और सामुदायिक जीवन कमजोर पड़ता है।

हिंदी सिनेमा ने भी किसान और ग्रामीण अर्थव्यवस्था के संकट को प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है। *Peepli Live* में किसान आत्महत्या के प्रश्न को मीडिया और राजनीति के तमाशे में बदल देने वाली व्यवस्था की विडंबना को उजागर किया गया है। फिल्म यह दिखाती है कि किसान की त्रासदी भी बाजार और टीआरपी का हिस्सा बन जाती है।

इसी प्रकार *Lagaan* औपनिवेशिक कर-व्यवस्था के माध्यम से किसान शोषण और सामूहिक प्रतिरोध की कथा प्रस्तुत करती है। यद्यपि इसकी पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है, परंतु शोषण और अन्याय के विरुद्ध किसान की एकजुटता आज भी प्रासंगिक प्रतीत होती है।

पूर्ववर्ती काल की फिल्म *Mother India* भी ऋणग्रस्तता, साहूकारी शोषण और नैतिक द्वंद्व के माध्यम से ग्रामीण अर्थव्यवस्था की त्रासदी को दर्शाती है। यह फिल्म इस तथ्य को रेखांकित करती है कि आर्थिक संकट केवल भूख या गरीबी का प्रश्न नहीं, बल्कि नैतिक मूल्यों और पारिवारिक संबंधों की परीक्षा भी है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में *Newton* ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों की प्रशासनिक उपेक्षा तथा विकास योजनाओं की विफलता को उजागर करती है। यह फिल्म संकेत करती है कि लोकतांत्रिक प्रक्रियाएँ तब तक सार्थक नहीं हो सकतीं, जब तक आर्थिक न्याय और बुनियादी सुविधाएँ ग्रामीण समाज तक न पहुँचें।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का संकट केवल कृषि-उत्पादन तक सीमित नहीं है। कुटीर उद्योगों का पतन, हस्तशिल्प का अवमूल्यन, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और कॉर्पोरेट पूँजी

का बढ़ता प्रभाव भी इसके महत्वपूर्ण कारण हैं। परिणामस्वरूप, गाँव की आत्मनिर्भर संरचना धीरे-धीरे कमजोर होती जा रही है। युवा पीढ़ी कृषि को असुरक्षित और अलाभकारी मानकर शहरों की ओर पलायन कर रही है, जिससे ग्रामीण जीवन का सांस्कृतिक संतुलन भी प्रभावित हो रहा है।

अतः स्पष्ट है कि किसान और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का संकट बहुआयामी है—आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक। हिंदी साहित्य और सिनेमा इस संकट को केवल आँकड़ों के माध्यम से नहीं, बल्कि मानवीय संवेदना के साथ प्रस्तुत करते हैं। स्वयं प्रकाश की कथा-दृष्टि और समकालीन फिल्मों के उदाहरण यह स्थापित करते हैं कि जब तक कृषि और ग्रामीण समाज को न्यायपूर्ण आर्थिक संरचना नहीं मिलेगी, तब तक समग्र राष्ट्रीय विकास का स्वप्न अधूरा ही रहेगा।

निम्न-मध्यवर्ग इक्कीसवीं सदी के भारतीय समाज का सबसे अधिक द्वंद्वग्रस्त वर्ग है। सीमित आय, बढ़ती महंगाई और सामाजिक प्रतिष्ठा बनाए रखने का दबाव उसके जीवन को जटिल बनाता है। स्वयं प्रकाश की कहानियों में यह वर्ग निरंतर मानसिक तनाव और आत्मग्लानि की स्थिति में दिखाई देता है।

हिंदी सिनेमा में *Badhai Ho* मध्यमवर्गीय सामाजिक मानदंडों और पारिवारिक दबावों को यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत करती है। वहीं *Jolly LLB* न्याय-व्यवस्था और आर्थिक विषमता के बीच संघर्षरत निम्न-मध्यवर्गीय पात्र को व्यंग्यात्मक रूप में चित्रित करती है। इन फिल्मों में आर्थिक स्थिति केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि कथा-संरचना का केंद्रीय तत्व है।

निष्कर्ष:

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा



में आर्थिक समस्याएँ केवल पृष्ठभूमि का विषय नहीं, बल्कि केंद्रीय विमर्श का आधार बन चुकी हैं। वैश्वीकरण, उदारीकरण और बाज़ारवादी नीतियों के प्रभाव ने भारतीय समाज की आर्थिक संरचना को गहरे स्तर पर प्रभावित किया है। आर्थिक विकास की चकाचौंध के पीछे छिपी असमानता, बेरोज़गारी, किसान संकट, श्रमिक असुरक्षा और निम्न-मध्यवर्गीय जीवन की विडंबनाएँ साहित्य और सिनेमा दोनों में गहन संवेदना और आलोचनात्मक दृष्टि के साथ चित्रित हुई हैं।

समग्र विवेचन से स्पष्ट है कि इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य और सिनेमा में आर्थिक समस्याएँ केंद्रीय विषय के रूप में उभरी हैं। वैश्वीकरण और बाज़ारवादी व्यवस्था ने जहाँ विकास की संभावनाएँ बढ़ाई, वहीं असमानता, बेरोज़गारी, किसान संकट और निम्न-मध्यवर्गीय संघर्ष को भी तीव्र किया। स्वयं प्रकाश की रचनाएँ इन समस्याओं को केवल आर्थिक अभाव के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय अस्मिता और नैतिक संकट के रूप में प्रस्तुत करती हैं।

हिंदी सिनेमा और साहित्य दोनों माध्यम आर्थिक यथार्थ को उजागर करते हुए सामाजिक संवेदनशीलता को जाग्रत करते हैं। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि आर्थिक विकास का प्रश्न सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा से गहराई से

जुड़ा है, और स्वयं प्रकाश का कथा-साहित्य इस विमर्श को सार्थक दिशा प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. स्वयं प्रकाश — चयनित कहानियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. स्वयं प्रकाश — प्रतिनिधि कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. स्वयं प्रकाश — आदमी जात का आदमी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. नामवर सिंह — कहानी : नई कहानी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. रामविलास शर्मा — समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. मैनेजर पांडेय — साहित्य के सामाजिक सरोकार, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
7. शिवकुमार मिश्र — हिंदी कहानी और सामाजिक यथार्थ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
8. कंनक जैन — अस्मिता के विरुद्ध : कथाकार स्वयं प्रकाश, नई दिल्ली।